सन्देश संख्या १२०

श्रीमद्भगवद्गीता के एक सारगर्भित सूत्र में समझदारी की ऊर्जा

परस्पर विपरीतों से रहित, आशीर्वाद और उत्कृष्टता के समुद्र में (अर्थात् भगवद्गीता में) बिना किसी भय के तुरंत कूद जाना चाहिए। यह सूत्र मानसिक काल अर्थात् चित्त ''मैं'' यानी कि मन द्वारा निर्मित विभाजन, विखण्डन एवं द्वैत से मुक्ति को दर्शाता है ।

प्रयाणकाले : जब चित्त ''मैं'' लय की अवस्था में होता है,

मनसाचलेन : जब विभेदकारी मन स्थिर हो जाता है,

भक्त्या : जब ''विभक्ति'' अर्थात् विभाजन समाप्त होता है ताकि भक्ति का उदय हो सके,

युक्तो : जब ''अयुक्त'' या ''वियुक्त'' अर्थात् असामंजस्य समाप्त होता है ताकि जीवन की जीवन्तता से सामंजस्य (युक्तता) स्थापित हो सके,

योग बलेन चैव : जब उपर्युक्त सभी प्रक्रियायें घटित होती हैं तब व्यक्ति निश्चित ही ऊर्जा (बल) और सजगता की अग्नि (योग) में स्थित होता है,

भ्रूवोर्मध्ये : यह सजगता ''तृतीय नेत्र'' में होती है अर्थात् अद्वैत की अवस्था में होती है । वैसी अवस्था में चित्तवृत्ति की भ्रामक द्वैतपूर्ण प्रक्रिया जिसे दो नेत्रों द्वारा दर्शाया गया है, के प्रदूषण से पूर्ण मुक्ति होती है,

प्राणम् आवेश्य : तब प्राण वायु (सूक्ष्म सजगता) जो कि लगभग श्वासरहित अवस्था है, चलने लगती है,

सम्यक् : वास्तविकता के प्रति जागृत होना,

स तं परं पुरूषम् : शरीर में चैतन्य का जो संयोजन है,

उपैति दिव्यम् : और यही प्रबोध है, शाश्वत और कालातीत अवस्था है ।

पूरा सूत्र इस प्रकार है :

प्रयाणकाले मनसाचलेन
भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव ।
भ्रूवोर्मध्ये प्राणम् आवेश्य सम्यक्
स तं परं पुरूषम् उपैति दिव्यम् ।।

(भगवद्गीता ८:१०)

हिन्दू विश्वास–पद्धति के अनुसार चैतन्य का यह संयोजन कृष्ण की बाँसुरी (मनुष्य की खोपड़ी के पीछे ''आज्ञाचक्र'' एवं आगे के हिस्से में स्थित ''कूटस्थ'' अर्थात् ''तृतीय नेत्र'' के बीच का स्थान) के मध्य स्थित है । ''सहस्रार ''(Crown Chakra)'' के केन्द्र भेदन द्वारा भी चैतन्य के इस संयोजन तक पहुँचा जा सकता है । इसे कुछ लोग ''ब्रह्मरन्ध्र'' भी कहते हैं । इसे ही ''आत्मा'' का स्थान माना जाता है । यही कारण है कि हिन्दू परम्परा में दाह संस्कार के बाद मृत शरीर के जल जाने पर उसकी खोपड़ी को लकड़ी के भारी टुकड़े से तोड़ा जाता है ताकि आत्मा ''मुक्त'' हो सके ।

बेचारे अहिन्दू लोग, आपकी बेचारी ''आत्माएँ'' ''मुक्त'' नहीं हो पातीं क्योंकि आपलोग मृत शरीर को कब्र में रखने के पूर्व उसकी खोपड़ी को नहीं तोड़ते हैं। एक धूर्त बुल्गारियावासी ने हाल ही में शिवेन्दु को लिखे अपने पत्र ''रहस्योद्घाटन'' में यह दावा किया है कि वह ब्रह्मरन्ध्र और कलान्तराल (fontanel) के बारे में सब कुछ जानता है तथा वह मृत्यु और ''आत्मा'' की मुक्ति प्रक्रिया के बारे में भी सब कुछ जानता है, जो वस्तुतः रोमांचक है । इसलिए शिवेन्दु बुल्गारिया के क्रियावानों को सुझाव देता है कि वे उसकी उच्च ''आध्यात्मिक'' जानकारी के कारण उसे अपना गुरु मान लें ।

कई कारणों से इस सारगर्भित सूत्र की व्याख्या कई हिन्दुओं द्वारा घृणित अन्धविश्वासों के साथ किया गया है । इन कारणों पर चर्चा करने का उपयुक्त स्थान यहाँ नहीं है । शायद हमलोग रिट्रीट के दौरान इस पर विस्तार से चर्चा करेंगे ।

यह सूत्र भ्रान्ति ''मैं'' के प्रति प्रतिक्षण मरने का निमंत्रण है ताकि मनुष्य भूतकाल के बोझ तथा भविष्य में कुछ ''बनने'' की लालसा से मुक्त होकर क्षण प्रतिक्षण प्रज्ञापूर्ण जीवन जी सके । तभी यह देखना सम्भव होता है कि जीवन कभी जन्म नहीं लेता और न ही कभी मरता है । यह तो शाश्वत अस्तित्वमय जीवन है । केवल शरीर जन्म लेता है और शरीर ही मरता है । ''तुम'' जीवन है । तुम पूरी मानवता हो, पूर्ण जीवन हो, न कि एक ''वैयक्तिक आत्मा'' एक अलग मन के रूप में ''तुम'' एक कल्पना मात्र है ।

।। जय सूत्र ।।